अहल्या

आशीर्वचन

श्रीनारायण चतुर्वेदी

'नहीं कस्तूरिकागन्धः शपथेन विभाव्यते ।' यदि शुद्ध कस्तूरी सामने रखी रहे तो फिर शपथ लेकर यह बतलाने की आवश्यकता नहीं रहती कि यह कस्तूरी है । वह अपनी सुगंध से स्वयं बतला देती है कि मैं कस्तूरी है ।

जब श्री गुलाब खंडेलवाल ने यह पुस्तक देकर मुझे भूमिका लिखने को कहा और मैंने उसे पढ़ा, तब सहसा मुझे संस्कृत की उपर्युक्त उक्ति याद हो आयी । मैंने सोचा कि यह काव्यकृति कस्तूरी की तरह मेरे समान व्यक्ति से प्रमाणित होने की अपेक्षा नहीं करती ।

काव्य रसास्वादन की वस्तु है । उसका विश्लेषण कर उसकी चीर-फाड़ करना उसके साथ अन्याय है । वह हमें लोकोत्तर आनंद देता है । उसका पढ़ना या सुनना गूँगे के गुड़ खाने की तरह है । उससे जो आनंद मिलता है वह शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता । काव्यरसिक उसका आनंद लेकर तृप्त हो जाते हैं । उसका समग्र प्रभाव उन्हें अभिभूत कर देता है और वे इस आनंद में खो जाते हैं । जो अरसिक हों उन्हें काव्य पढ़ना ही नहीं चाहिए, 'अरसिकेषु कवित्वनिवेदनम्' वर्जित है । 'अहल्या' भी ऐसी ही काव्यकृति है । उसने मुझे आनंदविभोर कर दिया । वास्तवमें इसके सम्बन्ध में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है । इतना ही कहना पर्याप्त है कि 'पढ़ो' और आनंद लो ।

कथा की दृष्टि से कवि ने 'अहल्या' की पारंपरिक कथा में उसके 'शिला' होने की बात को प्रतीक रूप में लिया है । शायद इस बुद्धिवाद के युग में वह बुद्धिवादियों के लिए इस कथा को ग्राह्य बनाने के लिए इस प्रकार की व्याख्या करने को विवश था । यह भी संभव है कि वह स्वयं भी वही विश्वास करता हो जो उसने लिखा है । किन्तु बुद्धि यह

शंका कर सकती है कि 'अहल्या' का शरीर युगों बाद-शाप और उद्धार के लम्बे अंतराल के बाद --- कैसे कमनीय बना रहा। किन्तु काव्य में 'शिला' होने की या लम्बे अंतराल के बाद उसके शरीर के कमनीय बने रहने की शंका व्यर्थ और असामयिक है। काव्य के प्रवाह में ये शंकाएँ अपने आप बह जाती हैं। कथा और काव्य का सौन्दर्य पाठक या श्रोता को इतना अभिभूत कर देता है कि ऐसी बुद्धिवादी शंकाओं के लिए अवकाश ही नहीं रहता।

मैं इस काव्य की शैली और वर्णन अथवा इसके कथोपकथन या नाटकीय तत्त्वों की चर्चा नहीं करूँगा जिनका विवरण पाठक को बतलाना व्यर्थ है। फिर भी मैं इतना कहने का लोभ संवरण नहीं कर सकता कि कवि के शब्द-चयन, उसके भाषा के अधिकार, सुन्दर वर्णमैत्री और अभिव्यक्ति की सामर्थ्य ने मुझे अत्यंत प्रभावित किया। प्रांजल और संस्कृतनिष्ठ भाषा होते हुए भी कहीं भी मुझे भाषा की क्लिष्टता नहीं दीख पड़ी। भाषा पर कवि का असाधारण अधिकार है। इस काव्य का प्रकाशन एक 'घटना' है और मुझे विश्वास है कि यह काव्य कालान्तर में हिन्दी का एक गौरवकाव्य माना जायगा।

श्रीनारायण चतुर्वेदी